International Journal of Applied Research 2018; 4(1): 505-506

**ISSN Print:** 2394-7500
**ISSN Online:** 2394-5869
**Impact Factor:** 5.2
IJAR 2018; 4(1): 505-506
www.allresearchjournal.com
Received: 19-11-2017
Accepted: 21-12-2017

**डॉ० रामपाल**
संस्कृत विभाग, के0 ए0 (पी0जी0) कॉलेज, कासगंज, उत्तर प्रदेश, भारत

**Corresponding Author:**
**डॉ० रामपाल**
संस्कृत विभाग, के0 ए0 (पी0जी0) कॉलेज, कासगंज, उत्तर प्रदेश, भारत

# पाणिनीय व्याकरण एवं पाल्यकीर्ति शाकटायन के व्याकरण में संज्ञाशैली विश्लेषण

**डॉ० रामपाल**

**सारांशः**
पाल्यकीर्ति शाकटायन ने अपने शब्दानुशासन में सामान्य संज्ञायें बहुत कम दी हैं। पूरे संज्ञा प्रकरण में छः सूत्र हैं, अन्य किसी व्याकरण में इतने कम सूत्रों से संज्ञाओं का काम नहीं चलाया गया है। सरलता की दृष्टि से इसका अधिक महत्व है। पाल्यकीर्ति शाकटायन ने नौ प्रकार के संज्ञासूत्रों का कथन किया है–

**संज्ञानियमनिषेधाधिकारनित्यापदवादविधिपरिभाषा।**
**अतिदेशविकल्पाविति गतयशब्दानुशासने सूत्राणाम्।।**

## संज्ञाशैली

'संज्ञा' शब्द सम् उपसर्गपूर्वक 'ज्ञा' धातु से 'अङ्' प्रत्यय होकर निष्पन्न होता है, इसका व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ है– "संज्ञायतेऽनयेति संज्ञा"[1] अर्थात् कोई भी उच्चरित शब्द जिससे किसी वस्तु अथवा द्रव्य का बोध हो, जब उच्चारणानुकूल अक्षर–विन्यास से युक्त होता है तो मनीषीगण संज्ञा कहते है।[2]
लघुशब्देन्दुशेखर की शेखरदीपक टीका में संज्ञासूत्र का लक्षण करते हुए कहा गया है कि "शब्दनियामकत्वं संज्ञासूत्रत्वम्।"[3]

## 1. संज्ञासूत्रों के प्रकार

स्वरूप की दृष्टि से संज्ञासूत्र दो प्रकार के होते हैं– (1) शब्दसंज्ञा, (2) अर्थसंज्ञा।

### (1) शब्दसंज्ञा

वृद्धि, गुण, उपधा आदि संज्ञायें शब्द संज्ञायें कहलाती है तथा "वृद्धिरादैच्, अष्टा0 1.1.1" आदि सूत्र इनके विधायक होने से इन नामों से जाने जाते हैं।

### (2) अर्थसंज्ञा

लोप, विभाषा आदि अर्थ संज्ञायें हैं "अदर्शनंलोपः अ. 1.1.59" तथा "नवेति विभाषा" अ. 1.1.44 आदि संज्ञाओं के विधायक सूत्र हैं।
पाल्यकीर्ति शाकटायन व्याकरण की अधिकांश संज्ञाओं पर प्रातिशाख्य ग्रन्थों का एवं पाणिनि व्याकरण का पर्याप्त प्रभाव दिखाई देता है और यही मुख्य कारण रहा है कि पाल्यकीर्ति शाकटायन ने लगभग इक्कीस संज्ञाओं को "आधिकारिक संज्ञा"[4] मानकर उनका विभिन्न स्थलों पर प्रयोग किया है, जो पाणिनीय संज्ञाओं के समान हैं तथा जो प्रातिशाख्यों से ली हैं –

1 महाभाष्य (प्रदीप) 5.2.91।
2 शब्देनोच्चारितेनेह येन द्रव्यं प्रतीयते।
तदक्षरविधौ युक्तं नामेत्याहुर्मनीषिणः।। वृ. दे. 1.42।
3 संज्ञाप्रकरणम्, पृष्ठ 4, लघुशब्देन्दुशेखर शेखरदीपकटीका।
4 जैनाचार्यों का संस्कृत व्याकरण को योगदान, प्रभा कुमारी, पृष्ठ 146।

| | प्रातिशाख्य | पाणिनि | शाकटायन |
|---|---|---|---|
| 1. | अनुनासिक्। ऋक्. प्रा. 1/14 | 1.1.8, 8.4.57 | 1.1.68 |
| 2. | अनुस्वार्। अ. प्रा. 2/48 | 8.3.23 | 1.1.110 |
| 3. | अव्यय। अ. प्रा. 4/71 | 1.1.37, 48 | 1.1.39 |
| 4. | उपसर्ग। ऋक्. प्रा. 12/17 | 1.4.59 | 1.1.25 |
| 5. | कृत्। वा. प्रा. 1/27 | 3.1.93 | 1.1.43 |
| 6. | गुरु। ऋक्. प्राति. 1/20 | 1.4.11 | 4.4.81 |
| 7. | तद्धित। वा. प्रा. 1/27 | 1.1.38 | 1.1.42 |
| 8. | ति। ऋकतन्त्र 29 | 1.4.60 | 1.1.26 |
| 9. | दीर्घ। ऋक्. 1/18 | 1.2.27 | 1.1.77 |
| 10. | द्वन्द्व। वा. प्रा. 3/127 | 2.2.29 | 2.1.80 |
| 11. | धातु। अ. प्र. 2/90 | 1.3.1 | 1.1.22 |
| 12. | पद। वा. प्रा. 3/2 | 1.4.14–17–20 | 1.1.62, 64 |
| 13. | प्रत्यय। वा. प्रा. 3/2 | 3.1.1 | 1.1.41 |
| 14. | प्लुत्। ऋ. प्रा. 1/30 | 1.2.27 | 1.1.99 |
| 15. | लघु। ऋक्. 18/38 | 1.4.10 | 3.3.14 |
| 16. | विभक्ति। वा. प्रा. 5/13 | 1.4.101 | 1.3.181 |
| 17. | विसर्जनीय अ. प्रा. 1/5 | 8.3.15 | 1.1.161 |
| 18. | संयोग। ऋक्. प्राति. 1/37 | 1.1.7 | 1.1.19 |
| 19. | समास। ऋक्. प्राति. 1/17 | 2.1.3 | 2.1.1 |
| 20 | हस्व। ऋक्. प्राति. 1/17 | 1.2.27 | 1.1.74 |
| 21. | अवसान्। वा.प्रा. 3/3 | 1.4.10 | 1.1.68 |

उपर्युक्त संज्ञाओं के अतिरिक्त शाकटायन व्याकरण में कुछ संज्ञाऐं बिना किसी परिभाषा के पढ़ी हैं, जिनकी संख्या पाँच है–

1. गुरोर्हलः। शा. व्या. 4.4.81
2. दीर्घः। शा. व्या. 1.1.77
3. प्लुतात। शा. व्या. 1.1.125
4., 5. लघो दीर्घोऽनजादेः। शा. व्या. 4.1.101

उपर्युक्त संज्ञाओं के अतिरिक्त कुछ संज्ञाऐं शाकटायन ने पाणिनि के अनुकरण पर ही दी है, जिनकी संख्या सत्रह है ––

| | पाणिनि व्याकरण | शाकटायन व्याकरण |
|---|---|---|
| 1. | अव्ययीभाव। अष्टा. 2.1.5 | अव्ययीभाव। शा. व्या. 2.1.6 |
| 2. | संख्या। अष्टा. 1.1.22 | संख्या। शा. व्या. 1.1.9 |
| 3. | इत्। अष्टा. 1.3.2 | इत्। शा. व्या. 1.1.5 |
| 4. | कृत्। अष्टा. 3.1.93 | कृत्। शा. व्या. 1.1.43 |
| 5. | तृतीया। अष्टा. 2.3.18 | तृतीया। शा. व्या. 2.1.49 |
| 6. | कर्मधारय। अष्टा. 1.2.42 | कर्मधारय। शा. व्या. 2.1.58 |
| 7. | द्विगु। अष्टा. 2.1.22 | द्विगु। शा. व्या. 2.1.61 |
| 8.,9. | घि, घ्व। अष्टा. 1.4.7, 1.1.19 | घि, घु। शा. व्या. 2.1.119, 1.1.23 |
| 10. | कर्म। अष्टा. 1.4.54 | कर्म। शा. व्या. 1.3.107,1.3.137,66 |
| 11. | कर्ता। अष्टा. 1.4.54 | कर्तृ। शा. व्या. 1.3.166 |
| 12. | सप्तमी। अष्टा. 2.3.7 | सप्तमी। शा. व्या. 1.3.185, 194 |
| 13. | द्वितीया। अष्टा. 2.3.12 | द्वितीया। शा. व्या. 1.3.187 |
| 14. | चतुर्थ्यौ। अष्टा. 2.3.12 | चतुर्थ्यौ। शा. व्या. 1.3.187 |
| 15. | तृतीया। अष्टा. 2.3.72 | तृतीया। शा. व्या. 1.3.188 |
| 16. | पञ्चमी। अष्टा. 2.3.24 | पञ्चमी। शा. व्या. 1.3.191 |
| 17. | षष्ठी। अष्टा. 1.1.48 | षष्ठ्या। शा. व्या. 1.1.47 |

आचार्य शाकटायन ने सात संज्ञायें पाणिनि से भिन्न दी है, जिन पर चान्द्र व्याकरण एवं जैनेन्द्र व्याकरण का प्रभाव है[5]–

| | पाणिनि व्या. | शा. व्या. | चान्द्र व्या. | जैनेन्द्र व्या. |
|---|---|---|---|---|
| 1. | परस्मैपद्। 1.4.99 | अतङ। 4.2.171 | अतङ्। 1.1.73 | म। 1.2.150 |
| 2. | टि। 1.1.64 | अन्त्याजादि। 1.2.107 | अन्त्याजादि। 5.3.138 | टि। 1.1.65 |
| 3. | एक, द्वि, बहु.। | एक, द्वि, बहु,। 1.1.102 | एक, द्वि, बहु.। 3.98 | एक, द्वि, बहु,। 4.148 | 1.2.155 |
| 4. | वृद्ध। 1.1.73 | दुः। 1.1.17 | आदैजाद्यच्। 2.4.90 | दु। 1.1.68 |
| 5. | उपसर्जनं। 1.2.43 | न्यक्। 2.1.123 | अप्रधान। 2.3.61 | न्यक्। 1.3.93 |
| 6. | सर्वनाम। 1.1.27 | सर्वादि। 1.2.170 | सवादि। 2.1.6 | सर्वनाम। 1.1.35 |
| 7. | सवर्ण। 1.1.9 | स्वः। 1.1.6 | सस्थान। 6.4.155 | स्व। 1.1.2 |

आचार्य शाकटायन ने कुछ संज्ञाओं में मौलिकता लाने हेतु एक नवीन पारिभाषिक शब्दावली अपनायी है, जिनकी संख्या पाँच है –

| | पाणिनि व्याकरण | शाकटायन व्याकरण |
|---|---|---|
| 1. | उपपदं। 3.1.92 | अस्युक्त। 2.1.22 |
| 2. | सम्बुद्धिः। 2.3.49 | एकामन्त्रण। 1.2.121 |
| 3. | गुणः। 1.1.2 | एङर्। 1.1.82 |
| 4. | लोपः। 1.1.60 | लुक्। 1.2.91 |
| 5. | सार्वधातुक्। 3.4.113 | श्लेल्। 4.3.19 |

## शाकटायन द्वारा पाणिनीय संज्ञाओं की सूत्र शब्दावली में अन्तर

| | पाणिनि व्याकरण | शाकटायन व्याकरण |
|---|---|---|
| 1. | मुखनासिकावचनोऽनुनासिकः। 1.1.8 | हलोऽनुनासिकेऽनुनासिकः स्वः। 1.1.106 |
| 2. | बहुगणवतुडति सङ्ख्या। 1.1.22 | घड्डति संख्या। 1.1.9 |
| 3. | शेषो घ्यसखि। 1.4.7<br>पतिः समास एव। 1.4.8 | घ्यसख्यद्वन्द्वपतीदुत्। 1.1.40 |
| 4. | सुप्तिङन्तं पदम्। 1.4.14 | सुङ्पदम्। 1.1.62 |
| 5. | स्वरादिनिपातमव्ययम्। 1.1.36 | तस्वन्ङामधण्....अव्ययम्। 1.1.39 |
| 6. | अव्ययीभावः। 2.1.5 | मिथोग्रहणे....अव्ययीभावः। 2.1.6 |

उपर्युक्त संज्ञाओं के अतिरिक्त पाल्यकीर्ति शाकटायन ने पाणिनि की वैदिक संज्ञाओं को स्थान ही नहीं दिया है–

1. उदात्तः। अष्टा. 1.2.29
2. अनुदात्तः। अष्टा. 1.2.30
3. स्वरितः। अष्टा. 1.2.31

उपर्युक्त स्वर व्यवस्था से भिन्नता का कारण पाल्यकीर्ति शाकटायन का जैन धर्मावलम्बी होना ही सिद्ध करता है, अथवा इससे भिन्नकारण तत्कालीन समय में स्वर व्यवस्था से मुक्त व्याकरण रचना का भी मुख्योदेश्य हो सकता है, अथवा ये भी हो सकता है कि आचार्य ने सार्थक संज्ञाओं को ही लिया हो एवं निरर्थक संज्ञाओं को प्रयोग रहित मानते हुए अपने व्याकरण में स्थान ही नहीं दिया हो।

इस प्रकार आचार्य शाकटायन ने अपने समस्त प्रयोजनों की सिद्धि उपर्युक्त संज्ञाओं द्वारा ही सम्पूर्ण कर ली है।

[5] जैनाचार्यो का संस्कृत व्याकरण को योगदान, प्रभा कुमारी, पृष्ठ 147।